P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-3* November- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अभिव्यंजना और प्रस्तुति

अमिता
प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
श्रीराम कॉलेज ऑफ हॉयर एजूकेशन,
बागपत

सारांश

यह स्वयं सिद्ध है कि अभिव्यक्ति के अनुरूप अभिव्यंजना तथा प्रस्तुत के अनुरूप प्रस्तुति होती है। सूर में विषय वस्तु का संकोच होने के कारण उन्हें 'अभिव्यंजना के क्रीड़ा भाव का कवि' नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः भाव विस्तार उनकी अभिव्यंजना को प्रभावित करता है। वे विस्तार और गहराई के कवि हैं। विस्तार गहराई में परिवर्तित होता चलता है। हृदय की विषालता आंतरिकता के विस्तार को सम्भव बनाती है। सूर के कवि में अभिव्यंजना की कूटबद्धता की और अभिमुख है। सूर अभिव्यक्ति और अभिव्यंजना में आत्मसाक्षात्कार होने का अवसर देते हैं। एक प्रसंग में अनेक प्रसंगों की योजना को सूर ने सम्भव बनाया है। अभिव्यक्ति को साधने में उनकी अभिव्यंजनाएं पूर्णतया सम्भव है। कथ्य एवम् अभिव्यंजना बल्लभाचार्य से प्रभावित है और सूर इसी आधार पर अष्ट्छाप के कवियों का नेतृत्व करते हैं। उनकी अभिव्यंजना और प्रस्तुति अनायास है। वह उनके कृतित्व में स्वयं निर्मित होती चलती है। उनकी उद्‌भावना शक्ति से उनकी प्रस्तुति सुशासित है जो कविता भाव से सुषोभित है उसकी अभिव्यंजना का स्वयं सुशोभित होना अवश्यंभावी है। उनकी अभिव्यंजना भाव चित्रण कला के मनोवैज्ञानिक पक्ष से भी परिचालित है। सूर हृदयग्राही अभिव्यंजना के कवि हैं। अभिव्यंजना कवि का मानस पटल भी है कुछ भी अभिव्यंजित होने से पूर्व मानस पटल पर चरितार्थ होता है। अभिव्यकित और अभिव्यंजना के बीच सम्बन्ध रहता ही है। प्रस्तुति में क्रियाओं एवम् प्रतिक्रियाओं का योग हुआ है। कवि–मानस में अभिव्यंजना और प्रस्तुति कृतित्व के संवाद के रूप में चरितार्थ हुई है। अभिव्यंजना के अनुसार 'भाव प्रकाष' है। नूतन भावों को अनूठे विधान में प्रस्तुत करना ही प्रस्तुति है। रूप–चित्र एवम् भाव–चित्र को उद्‌दीप्त करती है अभिव्यंजना। अभिव्यंजना की सतत् साधना करने वाले कवि के लिए वह साध्य हो जाती है। भावोदय से भावोद्रेक तक रचनाधर्मिता में नई अभिव्यंजना का अनुसंधान कवि नूतन प्रसंगों के अनुरूप करता है। भाव चित्रण में चित्त, गति, व्यापार एवम् चेष्टाओं के अनुरूप सूर का कवि स्वयं से संवाद कर संवाद के विधान को योजित करता है। भाव विह्‌वलता एवम् भाव विभोरता उनकी अभिव्यंजना को पराभूत कर देती है। भाव वैभव स्वयं प्रस्तुति में पारस्परिकता निश्चित है।

मुख्य शब्द : अभिव्यंजना, अष्ट्छाप, सूरसागर।

प्रस्तावना

इस प्रकार हिन्दी क्षेत्र की बोलियों में से ब्रज भाषा में संवाद करने वाले सूर एक मात्र कवि हैं। सूर की अभिव्यंजना में अनेक प्रयोग हुए हैं। मनोभाषा रूपांकन की प्रक्रिया, अन्तरागम, निष्कासन, अभिव्यंजना का भाषिक पक्ष, श्रुतिगोचर और दृष्टिगोचर, पूर्ववर्तिता, स्वमाध्यम की भूमिका, भाषिक प्रतिवेदनों का पारस्परिक सम्बन्ध श्रोता में प्रतिवेदन जाग्रत करते हैं। श्रुत शब्द का अभिव्यंग्य मानसिक ग्रहण है जो प्रयोग प्रसंग में आने पर उत्प्रेरक बन जाता है।

अध्ययन का उद्‌देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य अभिव्यंजना और प्रस्तुति के माध्यम से भाषा कौशल का विकास करना है।

साहित्यावलोकन

अभिव्यंजना मूलभूत प्रवृत्ति है जो मौलिक विशेषताओं से युक्त होती है। कृतित्व का आन्तरिक प्रकाशन बाह्य प्रकाशन को प्रभावित करता है। इसमें सरलता एवम् ऋजुता, उतार–चढ़ाव, आरोह–अवरोह अनायास ही उत्पन्न होते हैं। प्रस्तुति के प्रवाह में एक नये प्रवाह को जोड़ना महत्वपूर्ण है, जिसे सूर में देखा जा सकता है। कृतित्व क्योंकि संवाद है अतः कृतित्व की राह से सूर की परख करना उपयोगी है। कृतित्व का अनुसंधान करने के लिए अभिव्यंजना का अनुसंधान आवश्यक नहीं है, क्योंकि अभिव्यंजना मात्र सम्प्रेषण है। कृतित्व को

खोजने की क्रिया की पुनरावृत्ति वास्तविक अनुसंधान है। इस प्रकार 'केस स्टेड़ीज' प्रविधि से सूर के कृतित्व का अनुसंधान किया जाना चाहिए। सूर के कवि ने अभिव्यंजना और प्रस्तुति को सर्वथा नई दिशा दी है। उनके संवादों में गृहस्थ एवम् पारिवारिक जीवन का पूरा संसार चरितार्थ हुआ है। बाहर के विश्व और भीतर के संसार में अन्तर्सम्बन्ध में इस प्रकार वे असीम की साधना के कवि हैं। कृतित्व को कोना–कोना झांकने से तात्पर्य इसी असीम के आत्मसाक्षात्कार से है। उनके संवादों ने साहित्य और संवेदना का विकास किया है। "इतिहासकार का दायित्व है कि वह युगों के रिश्ते एवम् क्रिया–प्रतिक्रिया स्पष्ट करते हुए रचनाकार के सम्प्रेशण को प्रशस्त करे और व्यापक तत्व के अन्तर्गत उसका मूल्यांकन करे।भाव प्रकाशन का कार्य स्वयं प्रकाष्य होकर अनुरूप अभिव्यंजना का स्वतः अनुसंधान कर लेता है। रससिद्ध सूर के सम्बन्ध में इसे तद्रूपता अनुसंधान अभिव्यंजना स्वयं प्रस्तुत हो जाती है। प्रस्तुति की सार्थकता इस बात पर निर्भर है कि वह वास्तविक चित्र प्रस्तुत करे। इसे यथावत् प्रस्तुति भी नहीं कह सकते क्योंकि प्रस्तुति कवि के भीतर प्रस्तुति को चरितार्थ कर कृतित्व में चरितार्थ होती है और अनुसंधाता उस कृतित्व की राह से चरितार्थता का पुनर्निर्माण कर पुनरानुसंधान करता है।

विचार मूलक क्रियाशीलता, सन्दर्भ मूल अर्थविज्ञान, भाषा के क्रियाशील स्तर, मौखिक व्यवहार, उद्दीप्ति, गतिशील होना, भावुकता का धर्म भावतत्व है। शब्दार्थ का प्रदर्शन करना, मानस उद्भावना वाचिक सात्विक, आंगिक तथा मानसिक अवस्थाओं का प्रदर्शन एवम् उनका व्याप्त होना विशेष है। मनोदशाओं का प्रदर्शन एवम् उद्वेलन करने वाले सूर व्युत्पन्न भाव के कवि है –

"भाव अधीन रहौं सब हीं कै और न काहु नैक डरौ।
सूर स्याम अब कहीं प्रगट ही जहौं तहैं तै न हरौ।।

इसी कारण कर्कषता का बहिष्कार कर सूर ने अनेक भावों से संयुक्त भाव मूर्तियों को अर्थ सौरस्यपूर्ण पदावली द्वारा महारस का चित्रण किया है।"[1] अभिव्यंजना कृतित्व के बाह्य एवम् आन्तरिक रूप में जितनी सरल एवम् सहज होगी उसका प्रभाव उतना ही ग्राह्य होगा। अभिव्यंजना में कवि के व्यक्तित्व का प्रभाव उसके कृतित्व पर अनिवार्य रूप से होता है। अभिव्यंजना मूलभूत प्रवृत्ति है जो मौलिक विशेषताओं से युक्त होती है। कृतित्व का आन्तरिक प्रकाशन बाह्य प्रकाशन को प्रभावित करता है। कृतित्व क्योंकि संवाद है अतः कृतित्व की राह से सूर की परख करना उपयोगी है। कृतित्व का अनुसंधान करने के लिए अभिव्यंजना का अनुसंधान आवश्यक नहीं है, क्योंकि अभिव्यंजना मात्र सम्प्रेषण है। कृतित्व को खोजने की क्रिया की पुनरावृत्ति वास्तविक अनुसंधान है। सूर के कवि ने अभिव्यंजना और प्रस्तुति को सर्वथा नई दिशा दी है। उनके संवादों में गृहस्थ एवम् पारिवारिक जीवन का पूरा संसार चरितार्थ हुआ है। वात्सल्य भाव सघन है। तीखे व्यंग्य में गहरी आत्मीयता है। गृहस्थ जीवन की तन्मयता अधिक है। कृष्ण बाल रूप में तो वात्सल्य के ऐसे सघन आलम्बन रहे पर मानसिक रुप में उसके आश्रय के अनुसार कहीं चित्रित नहीं हुए। उनके संवादों में पारिवारिक प्रसार विद्यमान है। मध्यदेशीय जीवन विशेषतः सारे तनावों ओर आघातों को परिवार के आत्मीय वातावरण में झेलने के अभ्यस्थ है। जीवन के प्रति अनुराग जगाना परिवार के भावात्मक आकर्षणों का उद्घाटन करके ही सम्भव था। विधान की दृष्टि से सूरसागर को उनमुक्त प्रबन्ध कहा जा सकता है। आदि से अन्त तक सूर सागर का ये उनमुक्त विधान अपने में बेजोड़ है।"[2] अभिव्यंजना में अभिव्यक्ति का अन्तरभाव पिण्ड में ब्रह्माण्ड के अन्तर भाव के समान ही रहता है। सूरसागर में अर्थपूर्णता का विराट एवम् कोमल पक्ष इसी के अनुसार चित्रित हुआ है। एक भाव में सम्पूर्ण समग्रता को देखना और उस समग्रता से आगे जाकर चित्रण करना ही अर्थपूर्ण प्रस्तुति है। सूरसागर का आन्तरिक ब्रह्माण्ड अनेकानेक भावनाओं से युक्त है। साहित्यकार व्यंजनाकार भी है किन्तु अभिव्यंजना के वेग को रोकने में वह अवश है और वेग प्रस्तुति के माध्यम की साधना कर उसे स्वयं साध्य बना लेता है। मानस–चित्रों की अभिव्यंजना करने में भी सूर समर्थ सिद्ध हुए हैं। भाव की निष्पत्ति एवम् उसे उद्दीप्त उस सीमा तक जब तक वह सम्पूर्णता एवम् समग्रता के साथ चरितार्थता के अन्तिम स्तर को प्राप्त न कर ले–यही अभिव्यंजना और प्रस्तुति का प्रकार्य है। प्रस्तुति का महत्व इसमें है कि वह प्रस्तुत के साथ अप्रस्तुत को भी चरितार्थ करें। इसी प्रकार अभिव्यंजना का अर्थपूर्ण होना इस पर निर्भर है कि जो व्यंजित न हो उसके आगे जाकर व्यंजना को प्रकट करना। सादृश्य, साधर्म, तुलना, आरोप आदि प्रस्तुति में व्याख्येय अर्थ को उत्पन्न करते हैं।

'सूरसागर के संवादों का परीक्षण श्रीमदभागवत् के काव्य शास्त्रीय परिशीलन के संबंध में भी किया जा सकता है। "संस्कृत का पौराणिक वाङ्मय भारतीय मनीशा की बहुआयामी सर्जकता की प्रौढ़ प्रणीति है। विद्यावतां भागवते परीक्षा–भागवतं में विद्वानों की परीक्षा होती है। अन्तर्निहित चारुत्व का प्रकाशन अत्यन्त आवर्जक हुआ है। हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ उपालम्भ काव्य भ्रमरगीत श्रीमद्भागवत् के प्रभाव स्रोत से ही उत्थित हुआ है। श्रीमदभागवत ने भारतीय साहित्य में सन्देश काव्य को जन्म दिया कथोत्थ लावण्य हो या उत्पाद्य चारुता–प्रत्येक दृष्टि से श्रीमदभागवत् भावकोष के साथ ही ज्ञानकोष भी है। काव्य के द्वारा भागवत् में उन तत्वों को सत्य स्वरूप सिद्ध कर दिया गया है जिन्हें हम प्रथम दृष्टि से उलटवासियों के रूप में समझते हैं। वार्त्तालाप काव्य की दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। सकल शास्त्र, चूड़ामणि, सर्वजन ग्राह्यता, युक्ति–युक्तता मार्ग के वैचित्र्य का प्रकाशन, तत्वों का वैचित्र्य मनःप्रसाधन की क्षमता, वैदग्ध्यपूर्ण उक्ति, वाच्यवाचक वृत्ति, कमनीय वैचित्र्य, अर्थ रमणीयता के अध्ययन से अवगत होता है कि इस महाग्रन्थ में आत्माभिव्यक्ति प्रधान, बाह्यर्थक प्रधान, वर्णन प्रधान काव्य रूपों का एक साथ ही समावेश है।"[3]

भागवत् के प्रभाव से सूर ने सन्देश काव्य को आगे बढ़ाया है। भ्रमरगीत को उपालम्भ काव्य के रूप में प्रस्तुत किया है। कृतित्व का प्रयोजन संवाद द्वारा समाधान करना भी है जैसा कि सूर ने किया भी है। कहीं–कहीं वे युगीन समाधान का अन्तिम निर्णय कृतित्व के भीतर से

गुजरने वाले पाठकों पर भी छोड़ देते हैं। ऐसा बहुर्मुखी कृतित्व के चतुर्दिक संवाद के कारण सम्भव हुआ है। अर्थपूर्ण संवाद द्वारा व्यर्थ के विवादों का समाधान किया है। वार्त्तालाप एवम् युगीन संभाषण प्रणालियों के परिप्रेक्ष्य में सूरसागर सन्देश काव्य के रूप में है। विदग्धता अथवा वक्रोक्ति जहाँ तक हो सकती है, सूर के कवि ने प्रस्तुत एवम् अप्रस्तुत व्यापारों में उसका प्रयोग किया है। संवादों में भावोद्रेक महत्वपूर्ण है जिससे वैचित्र्य मूलक आह्लाद का समावेश हुआ है। भक्ति और दर्शन के सिद्धान्त संवादों द्वारा विकसित हुए हैं। यद्यपि सूर के संवाद पुष्टि मार्गीय संवाद हैं किन्तु अष्ट शाखाओं की वार्त्ताओं से युक्त वार्त्ता साहित्य के उदाहरण है। "सूर के संवाद लोकवार्त्ताओं के विकसित रूप है। महत्वपूर्ण है सम्प्रेषण ऊर्जा की अभिव्यक्ति लोकर्त्ता के अनगढ़ स्वरूप को सुगढ़ देने की प्रक्रिया। स्थापना बनाम प्रतिस्थापना है। क्रियाकारिता एवम् स्वतः श्रुति अभिप्रायों का विकास। लोकवार्त्ता वैज्ञानिक ओर लोकधर्म सब तर्को को काट देता है अतः लोक संग्रह के अनुरूप कवि–कर्म संवाद है। उत्तरोत्तर विचार–विमर्श की योग्यता कम होने पर उत्तरोत्तर ही भावुकता बढ़ती है। एक स्वयं अनेक होकर भी एक रहता है। अतः सार सरवस्व है संवाद। समूचा प्रसार है विश्व। लोक जीवन से लोकवार्त्ता पैदा हो जाती है। एकता करने वाले स्थाई एवम् अनेक अस्थाई लोकों का सृजन करते हैं संवाद। सूर के संवाद आश्रय लीलाओं के संवाद हैं क्योंकि विलक्षण मार्ग है संवाद। सूर के संवाद पुष्टि प्रसाद का निर्माण करते हैं। महात्मा श्री सूरदास ब्रजभाषा के वेद व्यास हैं। सूर के स्वाभाविक भावों से युक्त है संवाद। सूर रूपकों के सम्राट, उपमा, उत्प्रेक्षाओं के सुमधुर सजयता, संवादों के कालिदास, सामयिक कथनों के व्यास, वशिष्ट अनेकार्थक पदों के सफल सूत्रधार, उनमुक्त विरोधी, व्यंग्य कटाक्षों के सिद्धस्थ प्रयोक्ता तथा अपने समय की युग प्रतिनिधि कथन शैलियों, लोकोक्तियों और मुहावरों के अजस भण्डार है।"[4] सूर के संवाद में युग से असहमति विद्यमान होने पर भी अन्ततः सहमति स्थापित हो जाती है। सूर की अभिव्यंजना पद्धति के विषय में उल्लेख है–"सूरसागर में कृष्ण जन्म से लेकर श्रीकृष्ण के मथुरा जाने तक की कथा अत्यन्त विस्तार से फुटकर पदों में गाई है। भिन्न–भिन्न लीलाओं के प्रसंग लेकर इस सच्चे रस मग्न कवि ने अत्यन्त मधुर और मनोहर पदों की झड़ी–सी बाँध दी है। इन पदों के सम्बन्ध में सबसे पहली बात ध्यान देने की यह है कि चलती हुई ब्रजभाषा में सबसे पहली साहित्य रचना होने पर भी ये अत्यन्त सुडौल और परिमार्जित है। यह इतनी प्रगल्भ और काव्यांगपूर्ण है कि आगे आने वाले कवियों की शृंगार और वात्सल्य की उक्तियाँ सूर की झूठन–सी जान पडती हैं। अतः सूरसागर किसी चली आती हुई गीति काव्य परम्परा का चाहे वह मौखिक ही रही हो–पूर्ण विकास–सा प्रतीत होता है।"[5]

कला के क्षेत्र में नये मार्गों का उद्घाटन सूरदास, नन्ददास और उनके समकालीन भक्तों ने ही किया।"[6] प्रचलित अभिव्यंजना पद्धतियों में संवाद का महत्व स्थापित करने के कारण सूरदास का महत्व निश्चित रूप से है। अपने कृतित्व के माध्यम से संवाद को आगे बढ़ाने का कार्य सूर के कवि ने किया है। संवाद की प्रेरणा में सूर को प्राप्त होने वाले गुरु–प्रसाद का भी कम महत्व नहीं है। सूर के भक्त हृदय की अपनी मान्यताएं भी अभिव्यंजना में उद्भावनाओं को उत्पन्न करती हैं। संवादों के माध्यम से सूर के कवि में आत्माभिव्यंजना को मुक्ति दी है। उद्भावना शक्ति के द्वारा प्रेरणा लेकर सृजन की ओर उनमुख होना उनके कृतित्व की विशेषता है।

अभिव्यंजना में कृतित्व और व्यक्तित्व का गहरा सम्बन्ध होता है। सूर सत ही अभिव्यंजनाओं को अर्थपूर्ण अभिव्यंजनाओं में बदलने में समर्थ है। ऊपरी सतह को तोड़कर भीतर अवगाहन करना अनेक स्तरों पर संवाद करने की क्षमता से सम्भव होता है। सूरसागर इन्हीं अर्थव्यंजनाओं का सागर है। अभिव्यंजना के स्तर पर वे अपने कर्त्ता एवम् प्रयोक्ता होने को प्रमाणित करते हैं। सामान्यतया अभिव्यक्ति के अनुसार अभिव्यंजना होती है। किन्तु सूर अभिव्यंजना को अभिव्यक्ति के अनुसार बनाकर प्रयुक्त बनाते हैं। अतः काव्य रीतियों में विलक्षणता अभिव्यंजना में विलक्षणता को उत्पन्न करती है। सूर का प्रत्येक कवि अपने युग की अभिव्यंजना रीतियों को आत्मसात करता हुआ युगीन अभिव्यंजनाओं का अपने युग में प्रतिनिधित्व भी करता है। सूरसागर में सूर ऐसे ही कवि हैं जिनमें श्रोता–वक्ता, प्रश्नात्मकता उत्तर–प्रत्युत्तर पर आधारित खण्डन–मण्डन से जुड़ी तर्क–वितर्क की रीतियों द्वारा जीवन के अर्थ को चरितार्थ करने का प्रयास हुआ है। सूरसागर में व्यंजनाओं का चर्तुदिक प्रकाष देखा जा सकता है। संवाद प्रक्रिया पर बल देने के कारण उनका कृतित्व उनके पाठकों को भी तथा बहुमुखी संवादों को आगे बढ़ाने का अवसर देता है। इस प्रकार एक अद्भूत वैशिष्ट्य उनके कृतित्व में विद्यमान है। मध्यकाल के कवियों में भाव पक्ष की प्रबलता है जिससे रूढ़ि प्राप्त कला वैशिष्ट्य उनकी अभिव्यंजनाओं में नहीं है। सूर की आत्माभिव्यंजना में आत्मनिवेदन का भाव मुख्य है। अतः उनके कृतित्व का मूल धर्म मध्यकालीन जन से अधिकतम संवाद स्थापित करना है। "अतः भागवत् ज्ञान व्युत्पत्ति है, गुरु कृपा, अभ्यास, अलौकिक सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट होकर अथवा स्वयं अपनी ही मर्म वेदना से गुनगकुना उठना कृतित्व बीज की विद्यमानता का सूचक है। गीति पदों में आत्म निवेदन प्रतिभा का ही विषय है। सूर ने सारा लीलागान यथामति किया है। काव्य सृजन से भी अधिक उनका लक्ष्य था कृष्णभक्ति। सूर साहित्य प्रायः सभी कृष्ण भक्तों ने आत्माभिव्यंजना को प्रमुखता दी है, यह उनकी साधनागत विशेषता है। आत्माभिव्यक्ति की प्रवृत्ति कृष्णभक्ति का राग प्रधान रुप तथा नादमार्गीय साधना ने उन्हें मुक्तक गीति काव्यों की सीमा में आबद्ध कर दिया। नाभादास ने सूर के काव्य वैशिष्टय का परिचय देते हुए भक्त माल में 'उक्ति चोज' अनुक्रास को अर्थ अद्भुत तुकधारी कहा है।"[7]

सूर के संवादों में कृष्ण के प्रति प्रत्यक्ष आत्मनिवेदन एवम् गोपी भाव की अभिव्यक्ति विद्यमान है। उद्धव–गोपी संवाद में सुनने–सुनाने के प्रसंगों की योजना के द्वारा कथ्य की सिद्धि हुई है। साधना पद्धति का काव्यात्मक रूप ही अभिव्यंजना है। भाव संचार जितना भीतर है उतना ही बाहर भी है। भाषानुकूलता का प्रयोग

उनके संवादों में हुआ है। भावों को यथावत सम्प्रेषित करने की शक्ति से युक्त हैं संवाद। पहले से कही गई, सुनी–सुनाई सूक्तियों से आगे जाने का प्रयास हुआ है। सूर के कवि ने अभिव्यंजना की रीति–नीति का बखान भी किया है। हृदय–संवाद से आस्वाद तक संवाद सूर के कृतित्व को पुष्ट करते हैं। जो कहा जा चुका है उसे सर्वथा पृथक रुप में नयी वक्रताओं के साथ कहना सूर की विशेषता है। कही गई वस्तु को दरेरा देकर कहना एक कौशल मात्र न होकर प्रस्तुति का व्यापक है। मसलन अनेक कवियों ने अनेकों प्रकार से उपालम्भ का प्रयोग किया है किन्तु सूर के गोपियों के उपालम्भ साहित्य में उपालम्भ के उदाहरण हैं। इसी प्रकार सूर के व्यंग्य भी भावभूमि की जमीन से जुड़े होने के कारण अधिक वास्तविक हैं। हास–परिहास को भी अनेक वक्रताओं के प्रयोग से सहज रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास सूर का कवि करता है। इस प्रकार अभिव्यंजना के मानदण्डों में प्रभाव को कूट बनाकर प्रस्तुत करने और पुनः कुटबद्धता को सहजता में अर्थात् बदलने में सूर की अभिव्यंजना चमत्कारी भी है। अतः संवाद का महत्व है निश्छल भावों की सहज सम्प्रेषणीयता, क्योंकि स्पष्ट अभिव्यक्ति अनायास ही सम्प्रेषणीय हो जाती है। अभिव्यंजनाओं में पहेलियाँ बुझाने से ली गयी सूझ–बूझ का प्रयोग भी है। उद्धव पहेलियाँ बुझाते हैं जबकि वे गोपियों के सीधे कथनों का अर्थ न समझने का नाटक करते हैं। इसी से अर्थपूर्ण संवाद का निर्माण अन्ततः होता है। उनके संवाद बहुवचन के उदाहरण हैं। उद्धव का रास्ता भूलना अर्थात् गोविन्द द्वारा बताये रास्ते पर न चलना एवम् गोविन्द को अपने रास्ते पर चलाने का प्रयास करना पुनः गोविन्द के ही रास्ते पर आना अभिव्यंजना की एक चाल को अनेक मार्गों में गतिशील बनाने का अभिव्यंजना ही प्रकार है। चली आ रही प्रचलित संवाद परम्परा में बने रहकर अपने कृतित्व के अनुसार संवाद सामर्थ्य को सूर ने अर्जित किया है। सूरसागर की अभिव्यंजना पद्धतियाँ उपरोक्त से सुशासित है। सूरसागर में पूर्व में जो कुछ भी कहने से रह गया है उसकी उद्भावना करते हुए सूर संवाद–योजना करते हैं। अभिव्यंजनाओं का एक सार यह भी है कि कुछ कहते भी नहीं बनता अर्थात् कैसे कहा जाये एवम् सूर का कवि किस प्रकार वर्णन करें ? सूर के कवि ने अभिव्यंजना के निकट मार्गों का निराकरण किया है। सूर के संवाद तर्क–वितरकों के आधार पर मतवादों के संजाल से मुक्त करने का कार्य भी करते हैं। अगम एवम् अगोचर को प्रकट करने के साथ उनके संवादों में अर्थातीति होने की विशेषता भी विद्यमान है। कहीं अर्थ का अनर्थ न हो, यह चिन्ता सूर के कृतित्व में दिखायी देती है। संवाद में संकीर्णयानों के मार्गों को प्रशस्त करने के प्रयास हुए हैं। संवाद के नैसर्गिक गुणों का प्रयोग सूर के कवि ने सहज रूप से किया है। युग में प्रचलित साहित्यक संवाद की प्रचलित परम्पराओं को सूर के कवि ने आगे बढ़ाने का प्रयास किया है और सूरसागर सहृदयों के साथ अर्थपूर्ण संवाद करने के कारण महत्वपूर्ण भी है। सूर ने सिद्ध किया है कि साहित्यिक परम्पराओं के क्रमिक विकास को आगे बढ़ाकर उनमें नवीन उद्भावनाओं की निष्पत्ति की जा सकती है। इसी आशय से वे मध्यकाल में संवाद साहित्य का सृजन करने में सफल हुए हैं। साहित्यकार का संवाद तभी सार्थक होता है जब उस संवाद को ग्रहण करने वाले प्रत्युत्तर में कृतित्व से उतना ही सार्थक संवाद स्थापित करते हैं। इस प्रकार संवाद में सम्पूर्ण कृतित्व समाहित रहता है।

सूरसागर के अर्थपूर्ण सागर को परखने से पहले श्रीमद्भागवत् और सूरसागर के मथे हुए पारस्परिक संवाद को भी समझना होगा क्योंकि 'सूर कह्यौ भागवतानुसार' सरीखी उक्ति कम महत्वपूर्ण नहीं है। प्रभाव की पारस्परिकता को कृतित्व के मध्य होने वाले संवाद के प्रभाव से पृथक नहीं किया जा सकता। भागवतकार की अभिव्यंजना ने सूरसागर की अभिव्यंजना को कितना प्रभावित किया है, यह अपने आप में रोचक अनुसंधान है। भक्तप्रवर सूरदास की अभिव्यंजना भागवत् के अनुसार है या नहीं? अतः अभिव्यंजना की मौलिकता पर प्रश्न चिह्न लगना स्वाभाविक ही है। संवाद शैली का प्रयोग भागवत्कार ने भी किया है। उस स्थिति में सूर के संवादों का महत्व किस प्रकार है ? संवाद भागवत् में शैली और साधना मात्र है जबकि सूर में संवाद साधन से साध्य हो गये हैं। भागवत् में संवाद एक नाट्य–तत्व हैं जबकि सूरसागर में संवाद 'एक मात्र तत्व' हैं। इस प्रकार सूरसागर अर्थपूर्ण संवाद का उदाहरण है। "सूरसागर में गायत्री से श्रीगणेश भी भागवत् की भाँति यथावत नहीं मिलता। अतः द्वादश स्कान्धात्मक सूरसागर को लेने पर भी सूरसागर और श्रीमद्भागवत् में लक्षणानुसार अनेक विशमतायें परिलक्षित होती हैं। बाह्य कलेवर और दोनों ग्रन्थों की सामाजिक तथा बौद्धिक स्थिति भी उनमें क्षमता लाने में अक्षम सी है। श्रीमद्भागवत को विद्वानों की परीक्षा भूमि माना गया है परन्तु सूरसागर के सम्बन्ध में ऐसी कोई बात नहीं है। सूरसागर में महात्म्य आदि का सर्वथा अभाव है, इसमें जटिलता, दुरुहता तथा भ्रान्ति जैसी कोई बात ही नहीं है। जहाँ कवि संश्लिष्ट सांगरूपक पद हैं भी, वहाँ वे सर्वथा उक्ति में वैचित्र्य लाने तथा पाठकों के मनोरंजन के लिए ही हैं, उन्हें परीक्षा भूमि में घसीटने के लिए नहीं।"[8]

सूर में भावव्यंजक अभिव्यंजनाएं हैं और तद्नुसार भाव–संवलित संवाद। सूर ने भाव समृद्धि को बढ़ाते हुए, अर्थ का अनर्थ न कर उसे उत्कर्ष प्रदान किया है भावप्रवणता उनके संवादों की विशेषता है, जिसमें अहम् है भावों को अर्थपूर्ण बनाना। भाव जगत् के विभिन्न स्रातों का अनुसंधान करने वाले सूर भाव–साहचर्य से संवाद को अर्जित करते हैं। इस प्रकार सूरसागर भाव–संवलित अर्थनिधि से युक्त और अभिव्यंजना शक्ति से आच्छादित है। सूर के संवाद में उधार ली हुई उक्तियाँ न होने के कारण भावों की झूठन नहीं है। भाव विभोरता तुरन्त संवाद को निर्मित कर देती है। इस प्रकार मानव मात्र की सहज प्रवृत्तियों के रूप में संवाद स्वयं निर्मित हुए हैं। भाव पोषित आरोह–अवरोह, वैविध्य और बलाघात का प्रयोग सूर के संवादों में विशेष है। आन्तरिकता और क्रियाशीलता के साथ गतिदायकता से युक्त हैं संवाद। युगीन वाक् पद्धतियों को भी सूर ने उपस्थित किया है। सम्बन्ध कारक का सम और विषम प्रयोग इनमें विद्यमान है। परस्पर कथन से लेकर प्रस्तुत और अप्रस्तुत कथन क्रम का

विकास अनेक परिवर्तनों से युक्त है। इस प्रकार सूर ने संवाद मुलक पदों की रचना की है। चित्त वृत्तियों पर आधारित संवाद से लेकर प्रवासजन्य संवादों में भाव उन्नयन की प्रक्रिया विद्यमान है। प्रथम पुरुष के द्वारा अन्य पुरुष पर व्यंग्य का प्रयोग करने वाले संवाद मध्यम पुरुष का सटीक प्रयोग करते हैं। संवादों में तन्मय हेतुकता विद्यमान है। किसी अन्य ब्याज से उपालम्भ, नाना उक्तियों द्वारा उपहास व्यंग्यपूर्ण परिहास, उक्तिपूर्ण तर्कों की योजना से युक्त संवाद भाव सागर में निमज्जित हैं। सूर के संवादों में मौन पक्ष और मुखर पक्षों का वास्तविक सम्बन्ध है। एकवचन, द्विवचन और बहुवचन के प्रयोग से सधे हुए हैं।

सूर का अभिव्यंजना शिल्प स्वभावोक्ति का अभिव्यंजना क्षेत्र है। संवाद स्वाभाविक कथन होने के साथ आह्लादकारी सृजन के उदाहरण है। संवादों में भी त्रिभंगी मुद्राएं विद्यमान हैं। नाद सौन्दर्य को प्रकाशित करते हैं संवाद। इतना होने पर भी संवादों में आवरण भेद बना रहता है। सवा लाख पदों की रचना में यह निहित है कि संवाद 'गुंगे का गुण' हैं। रूप कथन एवम् प्रभाव कथन के साथ उत्सवधर्मिता भी संवाद कारक है। सूर के संवाद अर्थ वहन करने की असाधारण सामर्थ्य से युक्त है। वाक् शक्ति की व्यापकता कृतित्व की शक्ति को प्रकट करती हैं। अतः संवाद व्यवहार के कारक हैं। एक बोध–व्यापार की निष्पत्ति संवाद करते हैं। इस प्रकार वचन के कारक एवम् निमित्तियों के कारक हैं संवाद। "सूर के कवि ने प्रसिद्ध मार्ग को छोड़कर अन्यथा अन्य मार्ग को आत्मसात करने का कार्य किया है जिससे वे प्रयोग प्रवाह को बदलने में समर्थ हुए है। सूर के संवादों में प्रस्तुत अप्रस्तुत की समरसता है। सांकेतिकता एवम् अनेकार्थकता का मणिकांचन का योग इनमें है। प्रस्तुत की तरह अप्रस्तुत की भी कोई सीमा नहीं है। संवाद मूर्तिविधान भी करते है। साम्य और वैशम्य, औचित्य और वक्र का सहयोग इनमें विद्यमान है। संवाद ऋजुता का हृदय में अनुभव कराते हैं। अभिव्यंजना पद्धतियों को रूढ़ियों से मुक्त किया है। सूर का कार्य व्यापार चित्रण बुद्धि के द्वारा उत्पन्न किये गये व्यंग्य की तुलना में हृदय के द्वारा उत्पन्न व्यंग्य में अधिक प्रभावी होता है। प्रकरण वक्रता की योजना अर्थात् मूल प्रकरण में अन्य प्रकरणों की योजना उद्धव गोपी संवाद में है। संवाद देश और काल की परिक्रमा भी करते हैं महत्वपूर्ण है। रूढ़ियों से बँधना और रूढ़ियों को चटका देना।"[9]

अतः संवाद कृतित्व के भीतर का वेग है जिसका बाहर आना स्वाभाविक है। ब्रज में जन्म लेने वाला जन्मांध कवि ब्रजभूमि को अपनी काव्य भूमि बनाकर ब्रज संस्कृति को काव्य संस्कार में बदलकर संवाद योजना करने में सफल सिद्ध हुआ है। सूर की क्रीड़ा स्थली ब्रजभूमि में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व में क्रीड़ा भाव को जाग्रत किया है जो उनके संवादों में विद्यमान है। सम्बन्ध भावना के आधार पर ब्रज संस्कृति का चित्रण भी संवाद चित्रण ही है अनुभूति के विकास के समानान्तर ही अभिव्यक्ति और प्रस्तुति का भी विकास हुआ है। भागवत् में भाव के बदल जाने से सूर की अभिव्यक्ति का समग्र भाव स्वयं बदल गया है। 'केलिभाव, सखा भाव एवम् क्रीड़ा भाव का सामंजस्य सूर के कृतित्व को अद्वितीय बना देता है। मूल भागवत् के सार को ग्रहण करके उसे अर्थपूर्ण संवाद में बदलना अभिव्यंजना को नई बुनावट प्रदान करना है। सूरसागर का कवि सूरसारावली में साम्प्रदायिक सिद्धान्तों की व्यवहारिक व्याख्या को प्रस्तुत करता है। प्रमाणों से सिद्धान्तों की पुष्टि करते हुए सूरसारावली के कवि ने संवाद को दार्शनिक आधार दिया है। अभिव्यंजना में अन्तर बहिरंग एवम् अन्तरंग के अनुसरण से पड़ता है। सूरसागर की छाप सारावली में है या नहीं इसका प्रभाव विष्लेशण किया जा सकता है। संवाद को आगे बढ़ाने में सारावली का पाण्डित्य दर्शन एवम् शास्त्रोक्त ज्ञान कम महत्वपूर्ण नहीं है। संवाद कथा वाचकों की मिश्रित शैली का उदाहरण है। अतः संवाद स्वयं में अभिव्यंजना है, जिसमें सम्यकता एवम् वक्रता चारुता एवम् ऋजुता का समावेश स्वयं होता चलता है। सूर के संवादों में शील के निर्वाह के साथ वैदुश्य परम्परा का समावेश हुआ है। अतः कृतित्व में भी संवाद करने की शक्ति का वर्चस्व सर्वोपरि है। शब्दार्थ सम्बन्धों की लम्बी परम्परा का सर्जनात्मक उपयोग सूर के कवि ने सफलता के साथ है। यद्यपि उनके संवादों में पक्ष और विपक्ष की परम्परा पर चली आ रही शास्त्रार्थ परम्परा का परोक्ष प्रभाव भी है। अर्थ का अतिक्रमण करने की पद्धति अभिव्यंजना के गौरव को बढ़ाती है। वक्रता जितनी प्रभावशाली होगी उतनी ही प्रभावशाली अभिव्यंजना पद्धति भी होगी। इस प्रकार अभिव्यंजना का सम्बन्ध कृतित्व का संवाद के रूप में अर्थपूर्ण अध्ययन से है।

अर्थपूर्ण संवाद के रूप में सूरसागर का अध्ययन करने से पूर्व इन तथ्यों का परीक्षण करना होगा कि सूरसागर के संवाद पदों का श्रीमदभागवत् के अनुसार होना कितना तर्क संगत है–

श्रीमुख चारि स्लोक दस ब्रह्मा कौं समुझाइ।
ब्रह्मा नारद सों कहे, नारद व्यास सुनाइ।
व्यास कहे सुकदेव सौं द्वादष स्कंध बनाइ।
सूरदास सोई कहे पद भाषा करि गाइ।।
स्कन्ध 1, पद
गग गग गग गग गग
सूर कह्यौ क्यौं कहि सकै जन्म–कर्म–अवतार।
कहे कछुक गुरु–कृपा तैं, श्री भागवतऽनुसार।।
स्कन्ध 2, पद
गग गग गग गग गग
सुकदेव कह्यौ जाहि परकार।
सूर कह्यौ ताही अनुसार।। स्कन्ध 3, पद
गग गग गग गग गग
तिन हित जो जो किए अवतार।
कह्यौ सूर भागवतऽनुसार।। स्कन्ध 3, पद
गग गग गग गग गग
ह्यै बारह पृथ्वी ज्यौं ल्यायौ।
सूरदास त्यौं ही सुक गायौ।। स्कन्ध 3, पद
गग गग गग गग गग
यों भयौ दत्तात्रेय अवतार।
सूर कह्यौ भागवत अनुसार।। स्कन्ध 4, पद

अष्टछायी सूरदास के सूरसागर को श्रीमद्भागवत् का छायानुवाद न कहकर गुणानुवाद कहना सम्भवतः अधिक उचित होगा। उनके संवाद हृदयरूपी

सागर से उचछलित संवाद हैं। ह्रदयरूपी सागर में डूबने उतराने की प्रक्रिया को आत्मसात करके ही सूर के कृतित्व में अवगाहन किया जा सकता है।

सूर के संवाद हरि कथा कहने का प्रस्ताव करते हैं। ब्रजवासी होने का सूर की अभिव्यंजना पद्धति पर सम्यक् प्रभाव है। संवादों में प्रकृत गुण का भाव कवि के मानसिक जगत् की पड़ताल करने का अवसर प्रदान करता है। "संवाद मानवीय व्यवहारों को प्रेरित करने वाले कारणों के विष्लेषण की भी अपेक्षा रखते हैं। मनोविज्ञान वक्रता में निहित है। विचित्रता विविधता के साथ एकरूपता का अन्वेशण संवाद करते हैं। संवाद में सूर के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का प्रतिबिम्ब स्पष्ट है। सूर के अचेतन मन के दमित भाव काव्य का रूप धारण करके सगुण भक्ति का औचित्य स्थापित करते हुए कृष्ण तथा राधा के सौन्दर्य भाव को व्यक्त करके तृप्त हुए हैं। इसी कारण तादात्म्य और प्रतिरूपता के साथ आत्मभर्त्सना का भाव संवादों में विद्यमान है। उनका वाक् युद्ध मानसिक भावनाओं का आरोपण है। भ्रमर गीत के रूप में सूर ने अपने अचेतन की झुंझलाहट को गोपियों के माध्यम से अपने वाग्वैदिग्ध्य द्वारा मन के असन्तोष को प्रकट किया है। व्यंजना शक्ति से मन के भावों को सूत्र रूप में एक प्रहसन की भाँति तुरन्त ही व्यक्त करना एक प्रकार मनोवैज्ञानिक साधन है। सूर के भम्रर गीत में गोपियों का परपीडन भाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। गोपियाँ वक्रोह्यियों द्वारा उद्धव को दुःखी करके आनन्द का अनुभव करती है। कृष्ण एवम् कुब्जा के परस्पर प्रेम का सन्देश गोपियों के वंचित प्रेमी ह्रदय को उनके प्रेम की असफलता का आभास कराता है जो कुण्ठा के प्रादुर्भाव का कारण है। आहत ब्रज युवतियाँ इसे छिपाने के लिए कुब्जा पर व्यंग्य वाणों की वर्षा करती हैं। वे कुब्जा पर विभिन्न प्रकार के आरोपण व्यंग्य कटुक्तियों तथा उपालम्भों के द्वारा उससे प्रतिशोध लेने के लिए कटिबद्ध प्रतीत होती है।"[10]

इस प्रकार अभिव्यक्ति के तीन कोस तक सीमित रहने पर भी सूर व्यापक प्रस्तुति एवम् बहुमुखी अभिव्यंजना के कवि है। समग्र प्रभाव की दृष्टि से एक कुंज में निहित रहने वाला कवि अपनी अभिव्यंजना को सहज सम्प्रेषणीय बना सकता है, जिसे सूर ने सिद्ध किया है।कृतित्व के भीतर से अनुसंधान का रास्ता बनाने पर इस अवलोकन से सहमत हुआ जा सकता है–"सूर का कवि टेढ़ी चाल के सिर पर टेढ़ी पाग संवार कर टेढ़ा–मेढ़ा चला है। मथुरिया चौंगो की प्रतियोगिताओं का प्रभाव उनके स्वभाव में है। सूरदास के सम्बन्ध में प्रचलित चमत्कार पूर्ण बातों का कथनों के मूल भाव को समझने पर बल देता है। संवादों में पुष्टि एवम् खण्डन के प्रभाव विद्यमान है। वास्तविक स्वकथनों को सामान्य कथनों से अलग करना सरल नहीं होता। आत्मकथनों का पूर्ण आभास भी संवादों में है। रुचि मर्दन करने में सहायक हैं संवाद। संवाद में दूसरों को समझाने के साथ स्वयं को समझाने की भावना को विस्तृत किया है। संवादों में सूर का 'घिघियाना' वर्णित है। जिसे महाप्रभु बल्लभाचार्य ने छुड़ाया है। व्यंग्य में करुण का समावेश सूर के कवि ने किया है। व्यंग्य विनोद के साथ प्रासंगिक मृदुता भी विद्यमान है। उपालम्भों के प्रत्युत्तर में अपशब्दों का प्रयोग भी हुआ है। वितर्क की असाधारणता भी इनमें है। महत्वपूर्ण है विस्मय विमुग्धकारी व्यंग्य, विनोद प्रियता तथा चतुराई के कार्यो का वचनों के द्वारा परिचय, सीमातित उत्फुल्लता व्यंग्य वचन युक्त हास परिहास की क्रियायें।"[11]

बल्लभाचार्य ने सूरदास का घिघियाना छुड़ाया। सूरदास रचित बारह स्कन्धों में ललित राग–रागिनियों में सूरसागर अनुवाद भर नहीं है। सूर के कवि ने अपने कृतित्व में संवाद के अवसर ही उत्पन्न नहीं किये अपितु उनका उपयोग भी किया है। भाषामयी कुलचुड़ामणि के समान अनायास ही कृतित्व के माध्यम से प्रकट हो उठते हैं। इस प्रकार कुशल महाकवि के कवि छाप हैं संवाद। सूरसागर भागवत के अनुसार ही नहीं कहा गया है क्योंकि किसी बड़ी लकीर के बराबर लकीर खींचना भी अपने आप में मौलिकता है, सूर ऐसे ही कवि हैं। सूरसारावली में तात्विक संवाद की चर्चा है। लक्ष्य पदबन्धों के सार के साथ 28 तत्वों का प्राकट्य हुआ है। संवादों में अचिन्तयता और मनस्विता विशेष है। सूर के संवाद निर्जीव सजीव के अन्तर को भेद् देते हैं। इन संवादों में सरल सुलभ सह्रदयता एवम् गेयता कूटकर भरी है। अपने प्रभाव को व्यंजना के कारण ही सूर सर्वश्रेष्ठ वार्त्ताकार हैं। उनकी अभिव्यंजना प्रस्तुति में ऊँचाई–गहराई के नियमों का पालन हुआ है। इस प्रकार प्रस्तुति में भौंरा चकई का खेल अभिव्यंजना में केलि क्रीड़ा के रूप में आता जाता है। सूर भाव केलि और कूंजन के कवि हैं। उनकी अभिव्यंजना औचित्य अनौचित्य का विचार नहीं करती। इसके साथ ही सूर पुनरावृत्तियों का सर्जनात्मक उपयोग करना भी जानते हैं। अतः संवाद लघुमति सूर की रसना को पावन करते हैं। मध्यकाल की संवाद शून्यता को भरने वाला कवि चुप्पी को भी संवाद के रूप में प्रस्तुत करता है। सूर सारावली के सूर रस केलि के कवि के रूप में इस संकल्प को स्वीकार करते हैं कि– 'तेरा कृत मेरा यश हो जायेगा, वह सदा मेरे साथ रहेगा।' अपनी अनूठी अभिव्यंजनाओं के द्वारा भाव लोक में झांकने वाला कवि अर्थपूर्ण संवाद का कवि है। सूर की प्रस्तुति में आद्योपान्त ईमानदारी है। भाव को जिस रूप में ग्रहण करते हैं उसे उसी भाव में बिना लाग लपेट के चरितार्थ एवम् प्रकट कर देते हैं। उनके संवाद स्वयं–भू हैं। सुभाव उक्ति संवाद। उनकी वचन विदग्धता इस लिए विशेष है क्योंकि वह विपरीत योजना करना जानते हैं और उसे साधने में भी निपुण हैं। उभयपक्षीय भाव जगत् के अनुकूल–प्रतिकूल भावों को भी वे प्रयोग में लाना जानते हैं व्यंग्य विनोद और वक्रता द्वारा। भाव बल को संवाद बल के रुप में प्रस्तुत करना ही उनकी विशेषता है। संवाद का प्रयोग करने वाले पात्रों का व्यक्ति चरित्र भी पात्र और प्रसंग के अनुसार उभरता है। सुकुमारता सह्रदयता और मृदुता प्रस्तुति में बनी रहती है। कथन और व्यवहार में आत्मीयता होने के कारण व्यंग्य और विनोद में प्रियता का भाव रहता है। उपालम्भों के उत्तर में अपशब्दों के प्रयोग में हास–परिहास की झलक है। किन्तु सूर का कवि कटूता का समावेश नहीं होने देता। संवाद में प्राकृत एवम अतिप्राकृत तत्व एक साथ समाविष्ट हुए हैं इससे विस्मय का भाव संवादों को आच्छादित किये रहता है।

निष्कर्ष

अभिव्यंजनाओं में मृदु, चपल, विनोदी प्रकृति के साथ सहज और सरल प्रकृति का समावेश होता है। क्रीड़ा–कौतुक के प्रसंगों में गम्भीरता एवम् स्निग्धता बनी रहती है। अभिव्यंजना और प्रस्तुति में उन्मुक्तता और स्वच्छंदता है भावनाओं का दमन करने के स्थान पर उन्हें और अधिक प्रकट होने का अवसर देते हैं संवाद। सूर ने सम्बन्धों के सागर में क्रीड़ा कौतुक, मैत्री एवम् विनोदी स्वभाव के के साथ निःसंकोच के साथ हास–परिहास को चरितार्थ किया है। भावों को उत्तरोत्तर पूर्ण अतिक्रमण के द्वारा विस्तार देने का कार्य सूर के कवि ने किया है। स्वछन्द केलि के विशुद्ध रूप का प्रभाव उनकी अभिव्यंजना और प्रस्तुति पर हैं। संकोच के भाव को तोड़ने में भी सूर सफल हुए है। इस प्रकार सूर की अभिव्यंजना वितर्क और विमर्श पर आधारित न होकर भावनाओं के उतार चढ़ाव को उन्मुक्ता के साथ प्रस्तुत करती है। मानस की मनोवृत्तियों की व्यंजना से युक्त है उनकी प्रस्तुति। गुण स्मरण करके विस्मय को पा लेना सहज है। सूर के कवि ने मध्ययुग को दीनता से उभरने का अवसर दिया है। वह रुदन को हास–परिहास से ढकने का प्रयत्न करता है। सूर के स्वभाव में निहित विनोद प्रियता उसे भावों से ऊपर उठाती है। हास्य की प्रवृत्ति रूप बदल कर व्यंग्य बन जाती है कर्म का व्यंग्य वाणी के द्वारा प्रकट हुआ है। अतः सूरसागर के कवि के लिए भावों का आदान–प्रदान ही संवाद है। यह व्यंग्य और विनोदपूर्ण भी हो सकता है। सूर ने गोरव सूचक समस्त कथनों का उपहास किया है। व्यंग्यमुक्त गूढ़ और गम्भीर उक्तियों को गोपियाँ उपालम्भ में उड़ा देती हैं। व्यंग्य की प्रवृत्ति अपनी दिशा को स्वयं बदलती है। विस्मययुक्त विमुग्धकारी व्यंग्य के अनेक प्रसंग हैं। विनोद प्रियता, चतुराई और छल बन्द दिखायी देता है। वचन वक्रता उद्धव–गोपी संवाद में कटूक्तियों और सीधे सादे व्यंग्य के साथ चित्रित हुई है। व्यंग्यात्मक प्रषंसा, सीधा व्यंग्य मर्मान्तक है। कठोर कटाक्ष के अवसर भी पर्याप्त हैं। संवादों में चराचर विमोहन का प्रभाव ही विशेष है। सर्वत्र एक वैचित्र्य बना रहता है। इसी से प्रस्तुति में अद्वितीयता उत्पन्न रहती है जो चमत्कारिता से भिन्न है। भाव सम्पन्न हो जाने पर पूर्ण तादात्मय एवम् तन्मयता देखी जा सकती है। अतः सूर में विविध रूप व्यंजना ही अभिव्यंजना है। विरोध और सामंजस्य का चित्रण करके विस्मय की व्यंजना करना प्रस्तुति को अद्भुत एवम् वैचित्र्य से युक्त करना है। प्रस्तुति के बांकेबिहारी है सूर, जितनी विनोदी प्रकृति और_बंकता ने हास का अपूर्व विस्तार किया है। अनुरंजकता उनकी प्रस्तुति में विशेष है। एक प्रस्तुत से अनेक अप्रस्तुत चरितार्थ होते हैं। संवाद को सीधे–सादे निरलंकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है। इससे वे चित्र विचित्र एवम् अनुरंजित हैं। विमूढ़ता भी अपने आप में एक महत्वपूर्ण प्रस्तुति है। जहाँ कथ्य की मति, गति भ्रमित होकर वैचित्र्य को उत्पन्न करती है। कार्य व्यापार से युक्त हैं संवाद। वर्णन के स्थान पर चित्रण और उसके प्रभाव का निरूपण करते हैं संवाद। भाव चित्रण और प्रभाव वर्णन अनेक रूपों में निहित है। प्रस्तुति की महत्ता का कलेवर है भाषा। भाव बहुलता शब्दार्थ बहुलता पर निर्भर करती है। इसी से प्रस्तुति में विविधता और विचित्रता आती है। सूर सागर में व्यंग्य प्रयोगों की भरमार है जिसके लिए भाषा में भावों को पहुँचाने का अपूर्व वेग होना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *हौसिला प्रसाद सिंह, हिन्दी कृष्ण काव्य में व्यंग्य विनोद प्रकाशन, संस्थान, नई दिल्ली 1986, पृष्ठ 15*
2. *रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998, पृष्ठ 46*
3. *कृष्ण मोहन अग्रवाल, श्रीमदभागत काव्य शास्त्रीय परिशीलन कंचन, पब्लिकेशन, बोध्यगया,1984,पृष्ठ 61*
4. *बालमुकुन्द चतुर्वेदी, 'सप्ततंरगात्मक सूरसागर गोपाल, पुस्तकालय, मथुरा, 1970 पृष्ठ 14*
5. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 185*
6. *सावित्री सिन्हा ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्य में अभिव्यंजना शिल्प नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1961, पृष्ठ 17*
7. *छविनाथ त्रिपाठी, 'मध्यकालीन कवियों के काव्य सिद्धान्त' रिसर्च दिल्ली, 1961, पृष्ठ 212*
8. *डा0 वेदप्रकाश शास्त्री, 'श्रीमदभागवत और सूरसागर का वर्ण्य विषय का तुलनात्मक अध्ययन', सरस्वती सदन आगरा, सम्बत् 2026, पृष्ठ 15–16*
9. *ब्रजेश्वर वर्मा, 'सूर एक अध्ययन, हिन्दी पब्लिकेशन प्रयाग, विश्वविद्यालय, प्रयाग, 1950, पृष्ठ 269*
10. *डॉ0 कमल आत्रेय, 'आधुनिक मनोविज्ञान और सूरकाव्य' विभु प्रकाशन, दिल्ली, 1976, पृष्ठ 68–271*
11. *ब्रजेश्वर वर्मा, सूरदास,जीवन और काव्य का अध्ययन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2004 पृष्ठ 07, 348–355*